International Journal of Sanskrit Research 2023; 9(3): 165-168

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2023; 9(3): 165-168
© 2023 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 16-03-2023
Accepted: 20-04-2023

जितेन्द्र शुक्ला
शोधछात्र हिन्दी विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
जितेन्द्र शुक्ला
शोधछात्र हिन्दी विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली, भारत

तुलसी के 'रामचरितमानस' में सामाजिक संबंधों का बिम्ब

जितेन्द्र शुक्ला

सारांश
गोस्वामी तुलसीदास ने अपनी रचनाओं में अपने समय की परिस्थितियों का यथातथ्य वर्णन किया है। उस समय समाज की जो व्यवस्था थी उसका निरूपण तुलसी ने अपने काव्य में किया है। 'रामचरितमानस' ग्रन्थ में तुलसीदास ने सामाजिक ताने–बाने को पूर्ण रूप में व्यक्त किया है।

कूटशब्दः रामचरितमानस, तुलसी, सामाजिक संबंध

प्रस्तावना
गोस्वामी तुलसी की काव्य प्रबंध योजना धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक आदि परिस्थितियों को स्पष्ट करने के प्रयोजन के रूप में वह अपनी जन चेतना को अभिव्यक्त करती है। तुलसी के सम्यक साहित्य के विषय में आचार्य शुक्ल जी के अनुसार विश्लेषण करके बताया गया है कि ब्रह्म के स्तयरूप की अभिव्यक्ति और प्रकृति को लेकर गोस्वामी तुलसीदास की भक्ति पद्धति निरन्तर चली है। उनके राम पूर्ण धर्म स्वरूप राम ही है। ''राम के लीला क्षेत्र के भीतर धर्म के विविध रूपों का प्रकाश उन्होंने देखा है। धर्म का प्रकाश अर्थात ब्रह्म के सत्य रूप का प्रकाश इस रूपात्मक व्यक्त जगत के बीच होता है।
'रामचरितमानस' भारतीय संस्कृति का ऐसा 'नवविमल विधु' है, जो कभी धटता नहीं, निरंतर बढ़ता ही रहेगा तथा जो कभी अस्त भी होने वाला नहीं। 'सिया–राममय सब जग – जानी' की मान्यता रखने वाले गोस्वामी तुलसीदास ने, इस काव्य में राम के चरित्र का गुणगान कुछ इस प्रकार से किया है कि भारत की आदर्श समझी जाने वाली समस्त लोकमान्यताएं तथा समग्र भारतीय संस्कृति राम के व्यक्तित्व में समाहित हो गई हैं।
रामचरित मानस में स्थान न मिला हो। यह काव्यरत्न 'नानापुराणनिगमागम' में जो कुछ भी विस्तार से प्रतिपादित है, इन सब का साररूप है। गोस्वामी तुलसीदास ने इस काव्य रचना की रचना 'स्वान्तःसुखाय' की थी पर यह रचना भारतीय जनजीवन में सांस्कृतिक चेतना फैलाने का बहुत बड़ा माध्यम बनी। तुलसी का 'स्वान्तःसुखाय' प्रयत्न 'जन–जन हिताय' बन गया। इस का एक मात्र कारण यही है कि न तो लेकिन जीवन का और न ही धार्मिक तथा अध्यात्मिक जीवन का कोई अंश बाकी बचा जिसे रामचरितमानस में स्थान न मिला हो। इस दृष्टि से 'रामचरितमानस' को भारतीय संस्कृति का घोतक प्रतिनिधि कवि कहना कोई अत्युक्ति नहीं। 'रामचरितमानस' से उद्घाटित होने वाले भारतीय सांस्कृति के विविध पक्षों का वस्तुपरक विवेचन इस प्रकार किया जा सकता है–
'रामचरितमानस' की रचना इतिहास के जिस काल में हुई, उस समय पारम्परिक भारतीय धर्म विखराव के पथ पर अग्रसर था। प्राचीन भारतीय वैदिक धर्म का विकास अपने काल में ही कर्मकाण्ड और ज्ञानकाण्ड के परस्पर विपरीतगामी पेशों पर चल पड़ा था। इसी बीच बौद्ध और जैन धर्म पारम्परिक आस्तिक धर्म के विरोध में नास्तिक धर्मों के रूप में उद्धत हुए। दोनों में डटकर संघर्ष चला।
यह संघर्ष अभी चल ही रहा था कि पुराणें की अवतारवादी भावनाओं ने स्वयं वैदिक धर्म–शैव, शाक्त तथा वैष्णव आदि विविध सम्प्रदायगत धर्मों में विभाजित हो गया। एक ही मूल से वैष्णव आदि विविध सम्प्रदायगत धर्मों में विभाजित हो गया। एक ही मूल से उद्धत होते हुए भी इन धर्मों और सम्प्रदायों के अनुयायी अपनी मान्याओं को लेकर आये–दिन सड़ते रहते थे। वैदिक धर्म के विरोध में उठ खड़े हुए बौद्ध और जैन धर्म भी बिखराव के मार्ग पर अग्रसर हो तंत्र और योग की विकृतियों में भटकते जा रहे थे। भारतीय धर्म अलग अलग खेमों में वहां परस्पर उलझ रहा था कि इस्लाम धर्म अलग अलग खेमों में वहां परस्पर उलझ रहा था कि इस्लाम धर्म के प्रबल आवेग ने उसे तहस–नहस करना प्रारम्भ किया। धर्म की ऐसी ही जटिल परिस्थिति में गोस्वामी तुलसीदास जैसे महान आत्मा का प्रादुर्भाव हुआ। इस समय भारतीय धर्म को समन्वित कर एक पूर्व पर लाने की आवश्यकता थी।

यह कार्य गोस्वामी तुलसी दास ने रामचरित मानस के माध्यम से करने का स्तुत्य प्रयास किया। 'रामचरितमानस' अलग–अलग धाराओं में बढ़ते भारतीय हिन्दू धर्म को एक ही धारा का रूप देने का सफल प्रयास है। 'तुलसी' ने राम के ऐसे धर्म सम्मत रूप की कल्पना प्रस्तुत की, जिसे वैष्णव, शैव और शाक्त सभी मान्यता दे सकें। अपनी इसी कल्पना द्वारा उन्होंने कर्मकाण्ड और ज्ञानकाण्ड को भी एक जगह ला बैठाया। तुलसी के राम परब्रह्म के अवतार हैं। वे स्वयं अपने ही अन्य रूप शिव के उपासक है। शिव भी राम के बहुत बड़े भक्त हैं। उधर पार्वती और सीता परब्रह्म के भिन्न भिन्न स्वरूप शिव और राम की शक्तियां हैं। तुलसी ने राम के ही चरित्र के इर्द–गिर्द तमाम पौराणिक देवी–देवताओं को भी ला बैठाया चाहे गणेश हों, चाहे कार्तिकेय, चाहे दुर्गा सभी देवी–देवताओं को भी ला बैठाया और ये सभी देवी देवता परब्रह्म के अंश हैं। परब्रह्म की तीन मूर्तियां है – ब्रह्मा, विष्णु, महेश। राम विष्णु के अवतार हैं। विष्णु का बालक रूप है, ब्रह्मा सर्जक तथा महेश संहारक रूप हैं। 'रामचरितमानस' समस्त वैदिक या ब्राह्मण धर्म सम्बंधी मान्यताओं को अपने भीतर समाहित कर लेने वाल ग्रन्थ हैं। परम्परा की कोई ऐसी धार्मिक मान्यता नहीं हैं। जो रामचरित मानस में स्थान न पा सकी हो। 'रामचरित मानस' तुलसी के परम्परा ज्ञान और दीर्घकालीन स्वाध्याय का 'सुस्वाद' फल है। यदि इस काव्य को हिन्दू धर्म की संहिता कहा जाये तो कोई अत्युक्ति न होगी। अकेला रामचरित मानस ही समस्त भारतीय परम्पराओं एवं धार्मिक मान्यताओं का ज्ञान प्राप्त करने के लिए पर्याप्त है। तुलसी का धर्म सर्वव्यापी ब्राह्मण धर्म है। वे परम वैष्णव होने के साथ ही शिव और शक्ति के भी उपासक है। पुराणों के अन्य देवी–देवता भी उन्हें मान्य है। इस रूप में तुलसीदास वास्तविक भारतीय धार्मिक आस्था के प्रतीक हैं।

तुलसीदास धर्म के ज्ञाता होने के साथ भक्ति के भी मर्मज्ञ विद्वान थे। परम्परा प्रचलित सभी दार्शनिक विचारों का प्रत्याख्यान वे बहुत ही सरल एवं सुबोध भाषा–शैली में करते हैं। इनकी दार्शनिक स्थापनाओं की दृष्टि से 'रामचरितमानस' विशेष महत्वपूर्ण है। इसे देखते हुए तुलसीदास को किसी विशिष्ट दार्शनिक सम्प्रदाय से जोड़ पाना असम्भव सा दिखता है। तटस्थ दृष्टि से देखा जाए तो तुलसी ने शंकराचार्य ने 'अद्वैतवाद' के सहारे रामानुज के 'विशिष्टताद्वैतवाद' की स्थापना की है। शंकर ने ब्रह्म की मात्र 'चित्' सत्ता मानी थी। रामानुज 'चित्' और 'अचित्' दोनों ही सत्ता मानते हैं। तुलसी भी जगत को 'सियाराममय' देखते हैं। सीता प्रकृति स्वरूपा हैं। राम ब्रह्म स्वरूप। प्रकृति 'उचित्' है, ब्रह्म 'चित्'। अतः पारमार्थिक सत्ता 'चिदचिद्विशिष्ट' है।

इस प्रकार अद्वैत सत्ता का आभास देते हुए भी, वे भक्तों की उपासना के अनुकूल दिखायी पड़ने वाले ईश्वर के रूप–प्रतिपादन पर ही बल देते है।

तुलसी की दार्शनिकता चेतना भी समन्वय की भावना से मण्डित है। किसी दार्शनिक विचारधारा का प्रतिपादन उनका उद्देश्य ही नहीं था। उन्होंने अपनी 'रामकथा' में दर्शन का प्रयोग मात्र इसीलिए किया कि वे बहुत प्राचीन काल से दो भिन्न दिशाओं में प्रवाहित होती हुई ज्ञान और भक्ति की धाराओं को आपस में मिला सकें। 'रामचरितमानस' ज्ञान और भक्ति दो विपरीतगामी धराओं का पुनीत संगम है। ज्ञान और भक्ति में कोई भेद नहीं, बिना एक दूसरा अधूरा है। बिना दूसरे के वे प्रथम सुस्वादु नहीं हो सकता। 'काकुभुशुण्डि' तरूण से कहते है।

> ''भगतिहिं ग्यानहि वहि वाहे कुछ भेदा। उभय हरहिं भव–संभव खेदा''

अंतर केवल इतना है कि ज्ञान पुरूष और भक्ति स्त्री। दोनों का संयोग कितना मधुर है। ज्ञान के समीप भक्ति के रहते हुए, दूसरी स्त्री माया उसके समीप भी नहीं भटकती।

इस प्रकार तुलसी का प्रतिपाद्य भक्ति है। यदि वे राम–भक्ति का पद छोड़कर दार्शनिक के पद पर आसीन होते तो उन्हें निश्चित ही अद्वैतवादी कहा जाता। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल तुलसीदास के भक्ति के सम्बन्ध में लिखते है। ''गोस्वामी जी की भक्ति–पद्धति की सबसे बड़ी विशेषता यह है उनसकी सर्वागपूर्णता। जीवन के किसी पक्ष को सर्वथा छोड़कर वह नहीं चलती है। सब पक्षों के साथ उस की सांमजस्य है। न उनका कर्म या धर्म से विरोध है, न ज्ञान से। धर्म तो उसका नित्यलक्षण है। तुलसी की भक्ति को धर्म और ज्ञान दोनों की रसानुभूति कह सकते है। योग का भी उसमें समन्वय है, पर उतने ही का जितना ध्यान के लिए आवश्यक है।

तुलसीदास एक परमस्मृति वैष्णव भक्त थे। उन्होंने श्रुतियों और स्मृतियों में प्रतिपादित भक्ति के उच्चतम मार्ग का प्रतिपादन अपने काव्य–ग्रन्थों में किया। रामचरितमानस में सर्वप्रथम उन्होंने ज्ञान और भक्ति का समन्वय स्थापित किया। ज्ञान को महत्व देते हुए भी भक्ति को श्रेष्ठ बताते हैं। ज्ञान का मार्ग कृपाण का धार है, लोकजीवन का कल्याण तो भक्ति द्वारा ही सभंव है। बिना भक्ति के मोक्ष पद की प्राप्ति नहीं हो सकती।

तुलसीदास की मोक्षदायिनी भक्ति सेवक सेव्य की भक्ति है। उनका कथन है–

> ''सेवक सेव्य भाव बिनु, भव न तरिय उरगारि।
> भजहु राम पद पंकज, उस सिद्धान्त विचारि।।''

सेवक सेव्य भाव से राम के चरणों की वन्दना, अर्चना और पूजा ही उनकी भक्ति भक्ति की श्रेष्ठतम, मर्यादा है। सारा 'रामचरितमानस' उनकी इसी भक्ति–भाव से ओत–प्रोत है।' भरत, हनुमान, लक्षमण, सभी राम के चरणों की वन्दना सेवक सेव्य भाव से करते है। ये ही तुलसी की शक्ति के आदर्श भी है।

'रामचरितमानस' में भरत और हनुमान तुलसी की सेवक–सेव्य भाव या दास्य भाव की भक्ति के आदर्श हैं। इनके अतिरिक्त लक्ष्मण, निषादराज, विभीषण, सुग्रीव आदि भी राम के प्रति इसी भाव की भक्ति रखते है। संक्षेप में रामचरितमानस का कोना–कोना 'सियाराममय' है। तुलसी ने जो कुछ भी कहा, सब सीता और राम की भक्ति में लपेटकर। यही कारण है कि उनकी कृति परम्परा के भक्ति–प्रतिपादक ग्रंथों में सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है।

'रामचरितमानस' धर्म और दर्शन तथा भक्ति का ही श्रेष्ठ ग्रन्थ नहीं है, यह एक अद्भुत युग–चेतना मण्डित काव्य भी है। उस युग का सारा समाज, सारी राजनीति और सम्पूर्ण लोक व्यवहार इस काव्य ग्रन्थ में प्रतिबिम्बित हो उठा है।

मध्ययुगीन भारतीय राजनीतिक अवस्था का संकेत 'रामचरित मानस' में जगह–जगह मिलता है। उस समय प्रजा राज्य शासक की और पूर्णतया उदासीन थी, इसका संकेत मथरा के 'चेरि छोड़ि न होइब रानी' कथन में मिलता है। रावण के कुशासन और अत्याचार में तत्कालीन मुसलमान शासकों के कुशासन और अत्याचार में तत्कालीन मुसलमान शासकों के कुशासन और अत्याचार का संकेत मिलता है।

राजनीतिक कुचालों का संकेत देने के अतिरिक्त तुलसी ने 'रामचरितमानस' में अयोध्या के राज्य शासन का चित्रण कर आदर्श राजनीति का भी निरूपण किया। उनकी स्थापनाएं है – राजा ईश्वर का अंश है।

उसे ईश्वर के समान समदर्शी और प्रजा पालक होना चाहिए। जिस राजा के राज्य में प्रजा दुखी होती है, वह नरक का अधिकारी होता है। वही राज्य शासन अच्छा कहा जायेगा जिसका राजा प्रजा की राय लेकर कोई कार्य करता होगा। राजा दशरथ एक आदर्श नृपति के रूप में चित्रित हैं। वे कुशल नीतिज्ञ वीर, योद्धा, दलायु एवं प्रजा–पालक हैं। राम भी उन्हीं के गुण से भूषित हैं? उनका शासन काल 'रामराज्य' तो प्रजा की सुख–समृद्धि का वाचक ही बन गया है। इस प्रकार रामचरितमानस उदान्त राजनीतिक चेतना से भी मण्डित है।

'रामचरितमानस' में तुलसी ने एक आदर्श भारतीय समाज की कल्पना की है। वे समाज में वर्णाश्रम–व्यवस्था के पक्षपाती हैं। उनका दृढ़ मन्तव्य है कि व्यक्ति मनोरोग से अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए मिल जुलकर रहें।

रामचरितमानस का पारिवारिक चित्र तो अपने आप में एक उदाहरण है। अयोध्या में दशरथ का परिवार एक आदर्श परिवार है। इस परिवार के सभी अंग पिता–पुत्र, माताएं, वधुएं, पत्नियां आदि एक आदर्श प्रस्तुत करने वाले है। तुलसी ने अपने युग के विघटित समाज को देखकर ही, उनकी प्रतिक्रिया में इस आदर्श परिवार और समाज की कल्पना की है। रामचरितमानस का कोना कोना सामाजिक आदर्शों की सुवास से सुवासित है। तुलसी पर एक आरोप लगाया जाता है कि उन्होंने एक उच्च–आदर्श स्तरीय भारतीय समाज की कल्पना करते हुए भी उसमें नारी को विशेष स्थान नहीं दिया। वे शूद्र वर्ग और नारी दोनों को ही ताड़नीय बताते हैं। परन्तु यदि ध्यान से देखा जाये तो गोस्वामी जी ने अपनी और से कोई नवीन उद्वभावना व्यक्त की है। यदि नारी के प्रति उनका दृष्टिकोण होता तो संभवतः सीता का चरित्र इतना आदर्श न होता।

रामचरितमानस लोक–मर्यादा और नीति नीतियों का प्रतिपादक एक श्रेष्ठ काव्य ग्रंथ है। तुलसी का समाज रीति–रीति का पालन करने वाला समाज है। इनका पालन न करने वाला व्यक्ति दण्डित होता है। बलि इसी कारण दण्डित हुआ, रवण का इतना बड़ा ऐश्वर्य भी रीति–नीति के अनुसार आचरण न करने के कारण ही नष्ट हुआ।

रामचरितमानस का चप्पा–चप्पा लोक व्यवहार के उदाहरणों से भरा हुआ है। गोस्वामी जी अनूठी उपमाएं लोक–जीवन में ही अपना आधार खोजती हैं। वे जो कोई भी सामान्य बात कहते है उसके समर्थन के लिए लोक से ही कोई न कोई उदाहरण देते हैं। समाज के जिस अंग में उन्होंने खराबी देखी, उसकी 'भर्त्सना की। समाज के जिस आचरण को उचित समझा, मुक्तकंठ से उसी की प्रशंसा की। रामचरित मानस के सरल स्वाभाविक उपदेश पग–पग पर लोक जीवन का मार्ग प्रशस्त करने वाले हैं। इन सभी लोक चेतनाओं के समाहार के कारण ही तुलसी को लोकनायक की उपाधि प्राप्त हुई है। उन्होंने रामचरितमानस के माध्यम से भारतीय समाज को एक बहुत ही मूल्यवान उपदेश दिया– 'राम की तरह आचरण करना चाहिए, रावण की तरह नहीं। यही कारण है कि आज भी 'रामचरितमानस' हिन्दू जनता का प्रतिनिधि काव्य ग्रन्थ है।

भारतीय महाकाव्य परम्परा में रामायण, रघुवंशम् के बाद रामचरित मानस का नाम लिया जाता है। भाव–भाषा, शैली, अभिव्यक्ति, पद्धति, छन्द प्रयोग आदि सभी दृष्टियों से रामचरितमानस एक श्रेष्ठ महाकाव्य है। इस सम्बध में प्रबंध पटुता, सहृदयता इत्यादि सब गुणों का समाहार हमें रामचरितमानस में मिलता है। पहली बात जिस पर ध्यान दिया जाता है, वह है, कथा काव्य के भीतर, इतिवृत्त, वस्तुए व्यापार वर्णन, भावव्यजना और संवाद ये अवयव होते है।'' इन सभी का समीकृत उपयोग रामचरित मानस में मिलता है। कथा की तारतम्यता बनाये रखने के साथ ही तुलसी, पूरी काव्य में मार्मिक स्थलों की उद्वभावना में भी अत्यंत सफल रहे हैं।

'रामचरितमानस' में अनेक ऐसे कथा स्थल है जो विश्वजेता न बनकर रह गए है– जैसे 'रामवनगमन, चित्रकूट–प्रसंग, आदि ऐसे स्थल हैं जिन्हें किसी भी देश या संस्कृति का व्यक्ति सुन या पढ़कर प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। किसी काव्य की इससे बड़ी सफलता क्या हो सकती है। आठ सोपानों में बंटी :रामचरितमानस' की कथा इतनी सुगठित है कि अनेक अवान्तर प्रसंगों का समावेश होते रहने पर भी, मूलकथा की एकतारता कही से भंग नहीं होती।

रामचरितमानस में अवधी और ब्रज दो लोकजीवन की बोलियों का प्रयोग हुआ है। अवधी तो इस काव्य में अपने विकास के चरम शिखर पर पहुंच गयी है। इस काव्य के बाद अवधी में फिर कोई सफल काव्य रचना नहीं हो सकी। संस्कृत के तत्सम शब्दों से युक्त कर, तुलसी ने अवधी को एक शास्त्रीय भाषा का परम विकसित रूप प्रदान किया। इस सन्दर्भ में मुक्तिबोध अपने आलेख ''मध्ययुगीन भक्ति आन्दोलन का एक पहलू' में लिखते है– ''जहां तक 'रामचरित मानस' की काव्यागत सफलता का प्रश्न है, हम उनके सम्मुख हम केवल इसलिए नतमस्तक नहीं हैं कि उसमें श्रेष्ठ कला के दर्शन होते हैं, बल्कि इसलिए कि उसमें उक्त मानव–चरित्र के भव्य और मनोहर व्यक्तित्व सत्ता के भी दर्शन होते हैं।

तुलसी समय के सजग प्रहरी थे उनके काव्य में लोक कहित की भावना पूर्ण रूपेण पाई जाती है। उन्होंने अपने काव्य 'रामचरितमानस' में सामाजिक और आन्तरिक जीवन की विषमता को दूर कर उसमें समन्वय स्थापित करने की चेष्टा की। उन्होंने परिवारिक जीवन में भाई–भाई, पति–पत्नी, पिता पुत्रा माता–पुत्र आदि के सम्बन्धें का आदर्श रूप प्रस्तुत किया। मर्यादाओं का पंक्ति संदेश देने के लिए उन्होंने मर्यादा पुरूषोत्तम रूप में लोगों के सामने रखा है। राम का चरित्र हर क्षेत्र में आदर्श है। उनके साथ जुड़े हुए लक्ष्मण, भरत, सीता और हनुमान का आदर्श चरित प्रस्तुत है। इस प्रकार समाजिक मर्यादा का निर्वाह तुलसी काव्य में महत्वपूर्ण संदेश है। ये काम उन्होंने नहीं किया होता तो राम दशरथ के पुत्र एक राम ही बने होते व अन्तर्यामी राम नहीं हो पाते।

तुलसी का समन्वय जीवन और मूत्यु उनका सारा काव्य समन्वय की विराट चेष्टा है। लोक और शास्त्र का समन्वयक ग्रहस्थ और वैराग्य का समन्वय भक्ति और ज्ञान का समन्वयक निगुर्ण सगुण का समन्वय, भक्ति और ज्ञान का समन्वय, भाषा और संस्कृति का समन्वय, कथा और त्वज्ञान का समन्वय रामचरितमानस प्रारम्भ से लेकर अंत तक समन्वय का मत है। अपने युग की समस्याओं के समाधान के लिए तुलसी ने राम कथा के आख्यान का जो पुनर्गठित पाठ तैयार किया उसमें कलियुग के प्रतिलोग के रूप में राम राज्य की कल्पना की है।

तुलसीदास ने तत्कालीन समाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक विकृतियों को दृष्टिगत रखकर आदर्श समाज रामराज्य की परिकल्पना की जिसके लिए समाज को संघर्ष करने की प्रेरणा दी। इसका एक उदाहरण हमें सीता हरण के समय लंका पर आक्रमण के लिए वहीं की जनता को संगठित कर उनमें चेतना और साहस पैदा कर आम जन में नेतृत्व की क्षमता को उजागर किया है। राम चाहते तो अयोध्या से सेना मंगवा सकते थे लेकिन राम ने ऐसा नहीं किया। इस सन्दर्भ में रामविलास शर्मा का कथन उल्लेखनीय है– ''तुलसीदास की रचनाएं हमारी जनता में साहस और आत्मविश्वास भरती है। वे उसे अपना भाग्य स्वंय अपने हाथों बनाना सिखाती है। तुलसीदास ने जिस न्यायपूर्ण और सुखी समाज की कल्पना की थी, वह एक नये रूप में पूरा होगा। समूचे देश के साथ हिन्दी प्रदेश की जनता भी आगे बढ़ेगी। जातीय देश के साथ हिन्दी प्रदेश की जनता भी आगे बढ़ेगी। जातीय एकता के लिए जिसके अग्रदूत गोस्वामी तुलसीदास थे, दासता और दरिद्रता का अन्त करने के लिए, जिसके विरूद्ध तुलसीदास ने संघर्ष किया था तुलसीदास की अमरवाणि हमारे साथ है, वह नये भविष्य की तरफ बढ़ने के लिए जनता को बुलावा देती है।

तुलसी का काव्य इस प्रकार आज भी व्यक्ति के लिए, समाज के लिए, राष्ट्र के लिए, नैतिकता के लिए, साहित्य और मानवता के लिए आवश्यक व महत्वपूर्ण हैं। विश्व का एक ऐसा विशिष्ट महाकाव्य जो आधुनिक काल में भी उर्ध्वगामी, जीवनदृष्टि एवं व्यवहार धर्म तथा विश्वधर्म का पैगाम देता है। रामचरित मानस अनुभवजन्य का ज्ञान का अमर कोष है।

संदर्भ सूची

1. गोस्वामी तुलसी के साहित्य का विशेष मुहायन, भगीरथ मिश्र, पृ. सं.–77

2. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ. सं. 115, प्रकाशन संस्था नई दिल्ली
3. रामचरित मानस (अरण्यकाण्ड) तुलसीदास, पृ. सं. 416, गीताप्रेस गोरखपुर
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ. सं. 116
5. हिन्दी साहित्यः उद्‌भव और विकास–हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ. सं. 132, राजकमल प्रकाशन
6. निबंधें की दुनियाः मुक्तिबोध– सम्पादक– कृष्णदत्त शर्मा
7. विराम चिन्ह, रामविलास शर्मा
8. अस्था के दो चरण– डॉ. नगेन्द्र, पृ. संख्य 391